International Journal of Leading Research Publication (IJLRP)

E-ISSN: 2582-8010 ● Website: www.ijlrp.com ● Email: editor@ijlrp.com

साहित्य में संवेदना एवं संस्कृति

डॉ. सम्पूर्णानन्द गौतम

साहित्यकार चूंकि सहृदय एवं सामाजिक होता है। यही कारण है कि वह अपने आस पास के वातावरण से ही विषय वस्तु का चयन कर लेता है साहित्यकार का लक्ष्य सदैव साहित्य एवं समाज के विविध पक्षों को रेखांकित करना है इस परंपरा में वह समाज एवं जीवन की सभी घटनाओं, परिस्थितियों का पुनर्मल्यांकन करता है उपन्यासकार अपने संवेदशील मन में उन समस्त परिस्थितियों एवं प्रवृत्तियों का अध्ययन करता है जिनमें साहित्य और संवदेना एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं समाज की गतिविधियाँ संवदेना से प्रस्फुटित होकर साहित्य में परिवर्तित होती है। साहित्यकार समाज से विलग नहीं हो सकता है वह सदैव अपनी रचना के पात्र, कथानक, वातावरण, भाषा, शैली, उद्देश्य सभी तत्वों को इसी समाज में खोजने का प्रयास करता है यह ध्रुव सत्य है कि साहित्यकार अपने युग के प्रति संवेदनशील रहकर साहित्य रचना में प्रवृत्त होता है ''साहित्यकारों की संवेदना युग विशेष की समकालीन परिस्थितियों का प्रतिनिधित्व करती है।''[25] साहित्यकार का दायित्व होता है कि वह समाज से प्राप्त तथ्यों एवं यथार्थ का पुनर्निरीक्षण कर उन्हें सत्यापित करता हुआ अपनी कल्पना एवं मौलिक प्रतिभा के साथ उन्हें आदर्श रूप में व्याख्यायित करे मुकुन्द द्विवेदी ने इस संदर्भ में कहा है– ''जब साहित्यकार किसी यथार्थ को अभिव्यक्त करता है तो उस यथार्थ को एक विशेष सृजनात्मक प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। और इस प्रक्रिया से गुजरने के बाद साहित्यकार उस यथार्थ को एक विशिष्ट अर्थ प्रदान करता है जो किन्हीं अंशों में वस्तुगत यथार्थ से भिन्न होता है। इस भिन्नता में ही साहित्य का अपना सत्य अनुस्यूत होता है।''[2]

मानव समाज की गतिविधियों से प्रभावित होता है मन की अनुभूत संवेदना के द्वारा किसी घटना के सुख, दुख, भावों, द्वन्द्व से सम्पृक्त होता है आनंद, दुख, निराशा, क्रोध, प्रेम, हर्ष लज्जा, घृणा, जैसे अनेक विकारों से स्पर्श करता हुआ उसका मन कभी कोमल तो कभी कठोर होता है। डॉ. ऊषा यादव ने संवेदना टिप्पणी करते हुए कहा है कि – ''संवदेना ही मानव के अर्न्तमन की सर्वाधिक पवित्र भावना है। सहानुभूति के दो शब्द किसी के दुख कष्ट का निवारण भले ही ना कर सके, उसके दिल को तसल्ली तो दे ही सकते है। दुखी मनुष्य जब किसी की परदुख कातरता को देखता है, उसका हृदय अधिक भाव विह्वल, नयन, अधिक अश्रुमंडित तथा मुखाकृति और भी अधिक करूणा विहसित हो उठती है। निश्चय ही संवेदना हमें आत्मीयता के प्रगाढ़ बंधन में बाँधती है।''[3] साहित्य मानवीय संवेदना की अभिव्यक्ति का वाहक है साहित्य रचना के लिए साहित्यकार जिन संदर्भों से प्रेरणा ग्रहण करता है वह किसी न किसी रूप में संवेदना है संवदेना मानवे होने का प्रमाण है क्योंकि मानव होने पर हम किसी भाव के प्रति अपनी अभिव्यक्ति प्रकट करेंगे और यही संवेदना मानव के संबंधों की आधरशिला है। साहित्य रचना का आधार मानव की संवेदना से प्रेरित है मानव के मन मस्तिष्क में चल रहे द्वन्द्व की अनुभूति ही संवेदना है मानव समाज में रहकर अपने समाज, राष्ट्र, देश के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है वह समाज के हर पहलू पर अपना चिंतन प्रकट करता है कई बार यह चिंतन क्षणिक एवं मूक होता है मौन एवं क्षणिकता भावों का प्रवाह रोक देती है परन्तु जब कभी किसी विषय पर मानव का चिंतन मौन मूक व क्षणिक न होकर किसी भी अन्य रूप चाहे वो क्रांति हो या आंदोलन हो, परिवर्तन एवं बदलाव की चाह अवश्य रखता है भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब कभी मानव की संवदेना ने उग्र रूप धारण किया है तब नवीन चेतना के साथ कई परिवर्तन हुए है संवेदना मानव मन की अनुभूत भावों की परिचालक है। ''साहित्य में इस शब्द का प्रयोग सीमित अर्थ में नहीं किया गया है। विशेषतः जब हम मानवीय संवेदना की बात करते है तो उसका आशय मात्र ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव न रहकर मानव मन की अतल गहराइयों में छिपी करूणा, दया एवं संवदेना अनुभूति का भी व्यंजक है।''[4]

मनुष्य के भाव विचार को किसी भी सीमा में बाँधना संभव नहीं है यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो मानव को जन्म से स्वभाव के रूप में प्राप्त हुई है मानव का मन विचारों के द्वन्द्व में पक्ष–विपक्ष, सकारात्मक–नकारात्मक,

प्रभावों के साथ उलझता सुलझता रहता है। मानव एक ऐसा प्राणी है जिसका चिंतन, मंथन, विश्लेषण और अनुसंधान संवेदना की सार्वकालिक चेतना का संचालक है। रामदरश मिश्र लिखते है– ''साहित्य का मूल संबंध मानव की संवेदना से है। संवेदना के बिना साहित्य नहीं बनता। बुद्धि, दर्शन, ज्ञान विज्ञान सबको पहले जीवन में आत्मसात् होना पड़ता है। आत्मसात् होकर मानव संवेदना का अंत करना पड़ता है। तभी शक्तिशाली साहित्य की सृष्टि होती है। साहित्य सृष्टि की जटिल प्रक्रिया है जिसमें सौन्दर्य, चेतना, भाव–बोध, मूल्य–बोध, जीवन चिंतन, संशिष्ट रूप में प्रस्तुत होते है।''[5]

किसी विचार, भाव, मूल्य या तथ्य की अभिव्यक्ति के लिए हम किसी साहित्यिक विध का चयन करते हैं साहित्य में अनेक विधाओं के द्वारा भावों को अभिव्यक्त करने का प्रचलन है। प्रत्येक विधा का अपना एक ढंग या तरीका होता है। जिसे हम विधा की तकनीक या शिल्प कहते है अर्थात् यहाँ शिल्प से तात्पर्य होगा किसी भी साहित्यिक विधा में विचारों, भावों या मूल्यों को प्रस्तुत करने का ढंग साहित्य में हर विधा ने अपनी एक अलग तकनीक एवं शिल्प के सहारे साहित्य जगत में अपना अस्तितव बनाते हुए साहित्य का विकास किया है साहित्यकार के समक्ष जब कोई विषय उपस्थित होता है तो वह किसी ऐसी विधा का चयन करता है जिससे उसके विचारों एवं तथ्यों का प्राकट्य सही तरीके से हो सके अतः साहित्य की विधाओं में शिल्प का बहुत महत्व है। शिल्प के माध्यम से ही साहित्यकार अपनी भावना, अनुभूति, संवेदना को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। श्री मिश्र जी ने शिल्प के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है कि ''साहित्य में वस्तुतः की भाँति कला और शिल्प का भी अपना विशिष्ट महत्व होता है। कोई साहित्यिक कृति वस्तु तथा विचार तत्व की वहिका होते हुए भी एक कलात्मक ईकाई भी होती है। मूलतः वह एक कलात्मक सृष्टि ही है। जो कलाकार की अपनी संवेदनाओं, अनुभवों तथा चिंतन को इस रूप में पाठकों तक संप्रेषित करती है कि पाठक सहज ही उससे एक तादात्म्य का अनुभव करता हुआ इच्छित आनंद तथा संतोष प्राप्त करता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि कला के आवरण में प्रस्तुत की गई संवेदनाएँ तथा विचारकण ही साहित्य को साहित्य बनाते है। और उसे स्थायी महत्व भी प्रदान करते है। साहित्य के अंतर्गत कला और शिल्प दोनों की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका होती है।''[6]

संवेदना के कई प्रकार एवं स्तर होते है यह कब ? कहाँ ? कैसे ? प्रकट होती है? इसका स्तर क्या है? यह किस परिवर्तन की क्षमता रखती है ? इन सब प्रश्नों का उत्तर केवल परिस्थितियों पर निर्भर होता है परिस्थितियों संवेदना के प्रकार एवं स्तर का निर्माण करती है संवदेना को मापने का कोई पैमाना नहीं है भावों की गति, प्रवाह, उत्पन्न होने की स्थिति आदि मानवीय हैं जिन्हें अनुभव एवं महसूस किया जा सकता है। उपन्यास या साहित्य में संवेदनाजन्य भावों का प्रस्तुतीकरण भी परिस्थितियों या प्रसंग एवं घटनाओं पर आधरित होती है जिस प्रकार की घटना या परिस्थिति होती है। उसी प्रकार की संवेदना होती है साहित्यकार अपनी साहित्य रचना में संवेदना को लक्ष्य करके साहित्य नहीं लिखता है, अपितु संवदेना स्वतः प्रवेश करती है संवेदना विचारों, भावों, चिंतन,मनन, परिवर्तन में परिलक्षित होती है संवेदना का यह स्तर मानव के अनुसार अलग अलग होता है। साहित्यिक रचनाओं में संवेदना के विविध स्तर देखने को मिलते हैं। यह स्तर अलग–अलग परिस्थितियों एवं संदर्भों में दिखाई देते हैं। साहित्य सदैव अपने युग का प्रतिनिधित्व करता है अपने समय में घटित घटनाओं की व्याख्या विश्लेषण एवं समाधान प्रस्तुत करता है यह साहित्य का नैतिक दायित्व ही नहीं अपितु इसका साहित्यिक कर्तव्य भी है समय का चक्र निरंतर गतिशील है साहित्यकार की समय की गतिशीलता पर दृष्टि अधिक पैनी होती है साहित्य के माध्यम से युगीन घटनाओं का अध्ययन एवं विश्लेषण निरंतर उसी गति के साथ करता रहता है जिस गति के साथ समय का चक्र चलता रहता है साहित्यकार सदैव मानव से जुड़ी हुई संवेदना को अभिव्यक्ति देने का प्रयास करता है इसी संदर्भ में वह उन तथ्यों की खोज करता है जो वर्तमान समय की सटीक एवं यथार्थ व्याख्या करने में सक्षम है इसी संदर्भ में डॉ. वर्मा लिखते है– ''आधुनिकता एक ऐतिहासिक विश्लेषण है जो हमें देश काल का बोध देती है समसामयिकता देश काल के बोध के साथ सक्रियता की भी पुष्टि करती है। जिस भी देश काल में हम है उसकी सीमाएँ और विस्तार को हम समसामयिकता के यथार्थ द्वारा अनुभव करते है।''[7]

कोई भी युग हो वह साहित्यकार के लिए महत्वपूर्ण होता है देशकाल में घटित हर घटना उसकी लेखनी की कसौटी पर कसी जाना स्वाभाविक है। मुंशी प्रेमचंद कहते है– ''साहित्यकार बहधा अपने देशकाल से प्रभावित होता है जब कोई लहर देश में उठती है तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव रह जाता है। उसकी विशाल आत्मा अपने देश बंधुओं के कष्टों से विकल है और इस तीव्र विकलता में वह रो उठता है पर उसके रूदन में व्यापकता होती है। वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौमिक होता है।''[8] साहित्य लेखन सदैव सार्वकालिक मूल्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास करता है साहित्य अपने इस दायित्व की पूर्ति आदिकाल से करता आ रहा है डॉ. नगेन्द्र का मानना है– ''साहित्य अपने व्यक्त या मूर्त रूप में रचना अथवा कृति है। किन्तु अव्यक्त रूप में कृति के पीछे कृतिकार का व्यक्तित्व और कृतिकार के व्यक्तित्व की पीछे उसका सामाजिक परिवेश रहता है। अतः साहित्य का एक छोर सामाजिक परिवेश के साथ अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है।''[9] मानव ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना है यह संभवतः इसलिए कहा गया है कि मनुष्य में भावों को समझने की बुद्धि है मनुष्य समूह में रहना और उस समूह की व्यवस्था में सहयोग करने का भाव रखता है। वह अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन जीने के लिए कुछ नियम, सिद्धांत बनाता है उनका पालन करता है। ये नियम उसकी आवश्यकता एवं हितों की पूर्ति करते है। मानव सदैव अपने अस्तित्व एवं सुरक्षा को लेकर गंभीर रहता है और अपने कर्मों से संचित व्यवहार को नियमों के साथ जोड़कर आने वाली पीढ़ी को हस्तान्तरित भी करताहै। मानव के द्वारा जो भी जीवन व्यवहार के लिए आवश्यक था उसकी स्थापना के लिए बल दिया गया वातावरण परिस्थितियों को समझकर मानव ने अपने जीवन परिवेश की कल्पना को साकार रूप प्रदान किया। यह लगातार चिरकल से अपना व अपने समूह का विकास करने की दिशा में अग्रसर रहा है और आज भी उसका यह अनुसंधान जारी है। मानवे के जन्म से लेकर मृत्यु तक के व्यवहार और जीवन यापन का तरीका ही संस्कृति है ''संस्कृति जीवन का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है जिसमें हम जन्म लेते है इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए है अथवा जिस समाज में मिलकर हम जी रहे है उसकी संस्कृति हमारी है। यद्यपि अपने जीवन में हम जो संस्कार जमा करते है वह भी हमारी संस्कृति का अंग बन जाता है और मरने के बाद हम अन्य वस्तुओं के साथ अपनी संस्कृति की विरासत भी अपनी संतानों के लिए छोड़ जाते हैं।''[10] मनुष्य अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए जिन सिद्धांतों का निर्माण करता है वह उसके जीवन का संतुलन बनाये रखने में सहायक होते हैं वह अपनी स्वेच्छा से इन नियमों का पालन करता है। संस्कृति शब्द मानव के व्यवहार की संपूर्ण व्याख्या करने में सक्षम है क्योंकि किसी मानव या समाज की पृष्ठभूमि या उसके व्यवहार का मूल्यांकन उसकी संस्कृति के आधार पर ही किया जाता है। मानव के विकास के साथ उसकी संस्कृति का भी निरंतर विकास हो रहा है। ''संस्कृति विरासत जीवन का प्रतीक है क्योंकि मानव को यह पूर्वजों द्वारा प्राप्त होती है परंतु मानव अपनी विकास की परंपरा से प्रेरित हो संस्कृति में नवीनता को सम्पृक्त करताहै। उसकी शिक्षा दीक्षा, व्यवहार और संचित कर्म संस्कृति की अमूल्य निधि में सम्मिलित हो जाते हैं।'' संस्कृति एक सामाजिक विरासत है और वह संचय से विकसित होती है।''[11] मनुष्य ने अपनी बुद्धि चातुर्य से नवीन आविष्कार एवं अनुसंधान किए है वह लगातार प्रगति के पथ पर अग्रसर है। साहित्य, नृत्य, वास्तु, गायन, वादन, शिल्प, विज्ञान, तकनीक के क्षेत्र में लगातार प्रयासों के द्वारा मानव हितों की पूर्ति करने का कार्य कर रहा है इन सब के लिए वह विभिन्न कार्य क्षेत्र में सहयोग कर रहा है। ''मनुष्य ने धर्म का जो विकास किया दर्शन शास्त्र के रूप में जो चिंतन किया साहित्य, कला और संगीत का जो सृजन किया, सामूहिक जीवन को हितकर और सुखी बनाने के लिए जिन प्रथाओं व संस्थाओं को विकसित किया उन सबका समावेश हम संस्कृति में करते है।''[12]

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति संपूर्ण विश्व में सबसे प्राचीन है इसकी प्राचीनता के साथ ही इसके विश्व प्रसिद्धी का कारण संस्कृति के विविध पक्ष है। संस्कृति समाज का सभ्यता परीक्षण करने में सहायक होती है अतः मानव समाज की समस्त जानकारी और उसकी चेतना का अध्ययन संस्कृति के विविध पक्षों का मूल्यांकन करके किया जा सकता है। मानव का रहन–सहन, बोली, भाषा, परिवार, खान–पान, आचार–विचार, संस्कार, व्रत, नियम, त्योहार, पर्व आदि सभी तत्व उसकी संस्कृति की धरोहर माने जाते हैं। हमारी संस्कृति के अनुसार ही हमारा जीवन व्यवहार होता है हम कभी भी अपनी संस्कृति से विलम नहीं रह सकते है क्योंकि हमारे भाव और विचारों में एक

सकारात्मक ऊर्जा के रूप में संस्कृति विद्यमान रहती है। ''भारत में जो विविधता है, मात्र उसी से देश की प्राचीन सभ्यता का वैशिष्ट्य लक्षित नहीं होता। अफ्रीका अथवा चीन के केवल एक प्रांत यूनान में भी इतनी विविधता मौजूद है परन्तु मिश्र की महान् अफ्रीकी संस्कृति में वैसी निरंतरता नहीं देखने को मिलती, जैसी कि हम भारत में पिछले तीन हजार या इससे भी अधिक वर्षों में देखते है।''[13] एक मानव विभिन्न रूपों में दायित्व और कर्तव्यों से बंधा होता है फलस्वरूप उसके जीवन में विविध पक्ष देखने को मिलते है ये सब मिलकर संस्कृति को विभिन्न रंगों में रूपायित करते हैं। भारतीय संस्कृति के विविध रूप में हमें भारत जैसे विशाल, सुसंस्कृत एवं सभ्य देश में परिलक्षित होते है इसकी प्राचीनता इसका प्रमुख गुण है क्योंकि जब संपूर्ण विश्व कला साहित्य और संस्कृति से अनजान था उस समय हमारी सनातन संस्कृति स्वर्णकाल के सुनहरे अक्षरों में सजायी जा रही थी। संस्कृति का सीधा संबंध हमारी चेतना और हमारे ज्ञान, हमारी तकनीक, कला एवं शिल्प से है। हमारे भारत देश का ज्ञान–विज्ञान, अध्यात्म, तकनीक एवं दर्शन इतना उत्कृष्ट है कि हमें संपूर्ण विश्व ने विश्व गुरू की उपाधि से विभूषित किया है।

आज विज्ञान ने काफी प्रगति कर ली है। वह नवीन तकनीकों का प्रयोग कर प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने का प्रयास करता है अपनी प्रत्येक खोज को जब वह देखता है तो उसका अनुभव संस्कृति के प्रभाव को स्वीकार कर लेता है उसे आश्चर्य होता है कि जिस ज्ञान व तकनीक सहारे वह जिन निष्कर्षों तक पहुँचा भारतीय संस्कृति में वह बहुत सरल एवं स्पष्ट रूप से वर्णित है इसका सबसे छोटा उदाहरण सूर्य एवं चंद्रमा की दूरी की (युग सहस्त्र योजन पर भानु) व्याख्या द्वारा आसानी से समझा जा सकता है। अंतरिक्ष में होने वाली खगोलीय घटनाओं का सटीक विश्लेषण और पूर्वानुमान समारी संस्कृति को स्वर्णिम बनाता है। विद्यानिवास मिश्र जी कहते है– ''यह आकस्मिक संयोग मात्र नहीं है कि भारतीय ज्योतिष गणना निरवन गणना है, जिसमें सृष्टि के आरंभ के क्षण की स्थिति आज की दृश्य स्थिति से अध्कि महत्व रखती है, क्योंकि जीवन का सृष्टि के प्रथम क्षण के साथ अनिवार्य संबंध है।''[14] और भी ऐसे कई उदाहरण है जिनके माध्यम से संस्कृति की सार्वकालिकता का बोध होता है। संस्कृति निरंतर गतिशील होकर भी स्थिर है क्योंकि गतिशीलता क्षणिक है परन्तु इसकी स्थिरता सार्वकालिक है। किसी भी संस्कृति की सार्वकालिकता का बोध हमें उसकी तत्वगत विशेषताओं से प्राप्त हो जाता है भारतीय संस्कृति की प्राचीनता और सार्वकालिकता संपूर्ण विश्व विख्यात है ''भारतीय संस्कृति की संभवतः सबसे विशेषता है– अपने संदेश में इसकी निरंतरता भारतीय संस्कृति ने दूसरे देशों को किस प्रकार प्रभावित किया, यह अन्य ग्रंथों का विषय है। यहाँ हमारो उद्देश्य भारतीय संस्कृति के उद्गमों और इसके विकास के प्रमुख लक्षणों का अन्वेषण करना है।''[15] संस्कृति में मानव जीवन के अनुभवों को सम्मिलित किया जाता है मानव जब कोई नवीन अनुभव प्राप्त करता है तो वह उसे अपनी संस्कृति के साथ जोड़ने का भाव रखता है यही अनुभव मानव हित के दूरगामी परिणामों की व्याख्या करते हैं। वह निश्चित रूप से हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग बन जाता है। ''मानव समाज के वह संस्कार जो लौकिक और पारलौकिक उन्नति के मार्ग को प्रशस्त करते हुए उसके सर्वांगीण जीवन का निर्माण करते है उसकी संस्कृति के हो जाते हैं।''[16] हमारी संस्कृति की उन्नतशील परंपरा रही है। हम विज्ञान की दिशा में सदैव अग्रसर रहे हैं अतः हमारी संस्कृति अमर है। भारत एक शांतिप्रिय देश है। हमारी संस्कृति, अहिंसा, त्याग, समर्पण, चरित्र, दया, सहानुभूति एवं सहिष्णुता की रही है। हम अतिथि देवो भवः की परंपरा के वाहक है हम शांति के अग्रदूत है। परंतु हमारी इस शांति प्रियता पर बाह्य आक्रांताओं ने अनेक प्रकार से प्रहार किए है। लेकिन हमारी संस्कृति ने हमारी सकारात्मक ऊर्जा को बनाये रखा जिसके कारण जहाँ कई देशों का नामों निशान मिट गया हमारी संस्कृति आज भी अक्षुण्ण एवं सार्वकालिक बनी हुई है।

मानव ने अपने विचारों से समाज को अवगत कराने के साथ ही उन महत्वपूर्ण तथ्यों को भी संस्कृति में शामिल किया जो उसकी सकारात्मक ऊर्जा को उष्मा एवं प्रकाश प्रदान करते हैं। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति प्रारंभ से ही समृद्ध एवं विकसित रही है। यह दैवीय कृपा और मनुष्य के संचित कर्मों का प्रतिफल है। बाबू गुलाब रॉय के अनुसार ''संस्कृति का संबंध संस्कार से है जिसका अर्थ है संशोधन करना, उत्तम बनाना, परिष्कार करना, जातीय संस्कारों को ही संस्कृति कहते हैं।''[17] भारत भूमि पर जिन मूल्य एवं भावों को प्रस्तुत किया वे संपूर्ण

विश्व को वसुधैव कुटुम्बकम् की प्रेरणा देने वाले है ''हमने जिओ और जीने दो''। ''सर्वे भवन्तु सुखिन्'' की भावना को सार्वकालिक चेतना के संदर्भ में प्रस्तुत किया है। संपूर्ण विश्व में सर्वधर्म समभाव की व्याख्या प्रस्तुत की। प्रत्येक मनुष्य को स्वतंत्रता दी है मानवीय संवेदना ही परिभाषित नहीं किया अपितु पशु, पक्षी, प्रकृति, वातावरण, अंतरिक्ष आदि के प्रति भी अपने कर्तव्य एवं दायित्व बोध का भी अनुभव कराया । संयम अनुशासन के साथ उपभोग एवं ''अतिथि देवो भवः'' की परंपरा का भी पालन किया है। आज संपूर्ण विश्व में जब पाश्चात्य देशों में पर्यावरण का खतरा मंडराने लगा तो पाश्चात्य देशों ने विश्व में इसके दूरगामी परिणामों का ढिंढोरा पीटने लगे है परन्तु भारतीय मनीषियों ने अपने धर्म ग्रंथों में इस खतरे को वर्षों पूर्व स्पष्ट कर दिया था। असंयमित दिनचर्या एवं असंयमित उपयोग मनुष्य के साथ प्रकृति के लिए भी घातक है। भारतीय संस्कृति ने प्रदत्त संस्कारों के द्वारा स्वास्थ्य एवं सभ्यता के साथ प्रकृति के साथ संतुलन स्थापित करने में सहयोग प्रदान किया।

संदर्भ सूची

1. समकालीन संवेदना और हिन्दी नाटक – शेखर शर्मा, भावना प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 26
2. हिन्दी उपन्यास युग चेतना और पाठकीय संवेदना – मुकुन्द द्विवेदी, लोक भारती प्रकाशन, पृ. 5
3. हिन्दी महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना – डॉ. ऊषा यादव, राधाकृष्णन, नई दिल्ली, (1999), पृ. 168
4. हिन्दी महिला उपन्यासकारों की मानवीय संवेदना – डॉ. ऊषा यादव, राधाकृष्णन, नई दिल्ली, (1999), पृ. 197
5. आज का हिन्दी साहित्य : डॉ. रामदरश मिश्र, अभिनय प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 63
6. अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य – प्रकाश चंद्र मिश्र, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 32
7. आधुनिकता – दुर्गाप्रसाद गुप्ता, आकाशदीप प्रकाशन, मैहरोली, नई दिल्ली, (1995), पृ. 30
8. साहित्य का उद्देश्य – मुंशी प्रेमचंद, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, (1954), पृ. 75
9. साहित्य का समाजशास्त्र – डॉ. नगेन्द्र, नेशनल, नई दिल्ली, (1982), पृ. 04
10. संस्कृति के चार अध्याय – रामधारी सिंह दिनकर, राजपाल एण्ड संस सं 1956 दिल्ली, पृ. 653
11. भारतीय संस्कृति और कला – गैरोला वाचरपति उ.प्रा. हिन्दी संस्थान लखनऊ, सं. 1985, पृ. 44
12. भारतीय संस्कृति और उसका इतिहास – डॉ. समकेतु विद्याशंकर मंसुरी सरस्वती सदन
13. प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता – दामोदर धर्मानंद कोसंबी, पृ. 20
14. इतिहास परम्परा और आधुनिकता – विद्यानिवास मिश्र वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017, पृ. 16
15. प्राचीन भारत की संस्कृति और सभ्यता – दामोदर धर्मानंद कोसंबी राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009, पृ. 20
16. छायावादी काव्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन – प्रभुदयाल, नीरजबुक सेन्टर सं. (2007) दिल्ली
17. भारतीय संस्कृति की रूप रेखा – बाबू गुलाब रॉय 1952, पृ. 01